International Journal of Education and Science Research Review
P-ISSN 2349-1817, E- ISSN 2348-6457
www.ijesrr.org August- 2017, Volume-4, Issue-4 Email- editor@ijesrr.org

साहित्यकार मोहन राकेश जी के नाटकों में नारी पात्रों के अध्ययन का मूल्यांकन

Omprakash Suthar
Research Scholar
JJT University, Rajasthan

Dr.Shakti Dan Charan
Supervisor
JJT University, Rajasthan

सार–
मोहन राकेश बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकार थे किंतु नाटककार के रूप में उनका स्थान सर्वोपरि है। आधुनिक हिन्दी नाटक के विकास यात्रा में ''आषाढ़ का एक दिन'' तथा ''लहरों के राजहंस'' ने महत्त्वपूर्ण योगदान निभाया है। नाटक के बारे में राकेश की धारणा है कि जिस नाटक में रंग मचीय अपेक्षाओं को उपेक्षा हुई। साहित्यिक मूल्य रहते हुए भी नाट्य कृति नहीं मानी जा सकती। यह कथन से स्पष्ट होता है कि नाटक की संपूर्णता अभिनय–प्रदर्शन पर निर्भर है। संक्षेप में कहें तो हिन्दी नाटक और रंगमंच को एक सही तथा सार्थक पहचान देने की दिशा में मोहन राकेश का स्थान हिन्दी नाटककारों में अग्र गण्य है।

प्रस्तावना–
मोहन राकेश हिंदी साहित्य के उन चुनिंदा साहित्यकारों में हैं जिन्हें 'नयी कहानी आंदोलन' का नायक माना जाता है और साहित्य जगत में अधिकांश लोग उन्हें उस दौर का 'महानायक' कहते हैं। उन्होंने 'आषाढ़ का एक दिन' के रूप में हिंदी का पहला आधुनिक नाटक भी लिखा। कहानीकार– उपन्यासकार प्रकाश मनु भी ऐसे ही लोगों में शामिल हैं, जो नयी कहानी के दौर में मोहन राकेश को सर्वोपरि मानते हैं। मनु ने कहा, ''नयी कहानी आंदोलन ने हिंदी कहानी की पूरी तस्वीर बदली है। उस दौर में तीन नायक मोहन राकेश, कमलेश्वर और राजेंद्र यादव रहे। मैं मोहन राकेश को सबसे ऊपर मानता हूं। खुद कमलेश्वर और राजेंद्र यादव भी राकेश को हमेशा सर्वश्रेष्ठ मानते रहे।''
मोहन राकेश जी का जन्म आठ जनवरी, 1925 को अमृतसर में हुआ। किशोरावस्था में सिर से पिता का साया उठने के बावजूद उन्होंने हिम्मत नहीं हारी और पढ़ाई जारी रखी। राकेश ने लाहौर स्थित पंजाब विश्वविद्यालय से अंग्रेजी और हिंदी भाषा में एम0ए0 किया। एक शिक्षक के रूप में पेशेवर जिंदगी की शुरुआत करने के साथ ही उनका रुझान लघु कहानियों की ओर हुआ। बाद में उन्होंने कई नाटक और उपन्यास लिखे। मनु कहते हैं, ''मोहन राकेश की रचनाएं पाठकों और लेखकों के दिलों को छूती हैं। एक बार जो उनकी रचना को पढ़ता तो वह पूरी तरह से राकेश के शब्दों में डूब जाता है।''

राकेश के उपन्यास 'अंधेरे बंद कमरे', 'ना आने वाला कल', 'अंतराल' और 'बकलम खुद' है। इसके अलावा 'आधे अधूरे', 'आषाढ़ का एक दिन' और 'लहरों के राजहंस' उनके कुछ मशहूर नाटक हैं। 'लहरों के राजहंस' नाटक का निर्देशन रामगोपाल बजाज और अरविंद गौड़ जैसे रंगमंच के बड़े नामों ने किया। 'उसकी रोटी' नामक कहानी राकेश ने लिखी, जिस पर 1970 के दशक में फिल्मकार मणि कौल ने इसी शीर्षक से एक फिल्म बनाई। फिल्म की पटकथा खुद राकेश ने लिखी थी।

साहित्यकार प्रेम जनमेजय का कहना है, ''मोहन राकेश की रचनाओं में गजब की प्रयोगशीलता थी। उनके हर नाटक और उपन्यास में कुछ अलग है। एक महान लेखक होने के अलावा उनमें लेखकीय स्वाभिमान था। इसको लेकर व विख्यात हैं। नयी कहानी के दौर में उन्होंने अपनी अलग पहचान बनाई।'' हिंदी साहित्य में उनके अमूल्य योगदान के लिए राकेश को 1968 में संगीत नाटक अकादमी सम्मान से नवाजा गया। 3 जनवरी, 1972 को महज 47 साल की उम्र में राकेश का निधन हो गया।

स्वातंत्रोत्तर हिंदी नाटकों के इतिहास में मोहन राकेश का नाम बहुत आदर के साथ लिया जाता है। हिंदी नाट्य साहित्य में भारतेंदु और प्रसाद के बाद यदि लीक से हटकर कोई नाम उभरता है तो वह नाम मोहन राकेश का है। हालाँकि बीच में और भो कई नाम आते हैं, जिन्होंने आधुनिक हिंदी नाटक की विकास–यात्रा में महत्वपूर्ण पड़ाव तय किए हैं, फिर भी मोहन राकेश को इसलिए स्मरण किया जाता है, क्योंकि उन्होंने हिंदी नाटकों को अंधेरे बन्द कमरे से बाहर निकाला और उसे युगों के रोमानी ऐंट्रजनिक सम्मोहन से उभारकर एक नये दौर के साथ जोड़कर दिखाया। इसी संदर्भ में बकलम

खुद नामक आलोचक मोहन राकेश के बारे में लिखते हैं – "लेखक कमिटेड किसी विचारधारा से न होकर अपने समय से और समय के जीवन से होता है। यदि वह सचमुच अंदर से कमिटेड है तो वह अंधे की तरह लकडी लेकर अंधेरे में अपने अकेले के लिए रास्ता नहीं टटोलता य बल्कि अंधेरे और आंतक पैदा करनेवाली शक्तियों के साथ अपने समूचे अस्तित्व से लड़ जाना चाहता है।"

मोहन राकेश को उनके नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' के सर्जक के रूप में जाना जाता है। यह नाटक सन् 1958 में प्रकाशित हुआ था। इसे हिंदी के आधुनिक नाटकों के क्रम का पहला नाटक भी कहा जाता है। सन् 1959 में इसे सर्वश्रेष्ठ नाटक होने का सम्मान संगीत नाटक अकादमी के द्वारा दिया गया था। मोहन राकेश के इस वैचारिक नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' को लेकर मणिकौल ने सन् 1971 में एक फिल्म का निर्माण भी किया था, जिसे फिल्मफेयर अवार्ड भी मिला। "मोहन राकेश के द्वारा रचित 'आषाढ़ का एक दिन' को हिंदी साहित्य जगत में मील का पत्थर कहा जा सकता है। इसी तरह मोहन राकेश की प्रसिद्धि का दूसरा आधार उनके द्वारा रचित नाटक 'आधे–अधूरे' है। मोहन राकेश का नाटक 'आधे अधूरे' पहले पहल 19 एवं 26 जनवरी तथा 2 फरवरी 1969 के तीन अंकों में 'धर्मयुग' में क्रमशः छपा और 2 मार्च 1969 को दिल्ली की नाट्य संस्था दिशांतर ने इसे ओम शिवपुरी के निर्देशन म अभिमंचित भी किया गया था।"

आधुनिकता के बीच राकेश एक मानवीय ऊष्मा को पहचानने के लिए बेचैन दोखते हैं। वे कहा करते थे कि मैं एक असंभव लेकिन बहुत ईमानदार आदमी हूँ। इसी संदर्भ में आलोचक 'नई कहानी' के संपादक नामवर सिंह कहते हैं – "'नई कहानियाँ' में परंपरागत नाटक के दायरे से सर्वथा मुक्त नहीं है। किंतु इससे एक नए समारंभ का आत्मसजग आभास अवश्य मिलता है।" मोहन राकेश के पहले नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' की पृष्ठभूमि कालिदास के समय 'गुप्तकाल' की है। उनके दूसरे नाटक 'आधे अधूरे' की पृष्ठभूमि आधुनिक काल की है। दोनों नाटकों में काल का अंतर होने के बाद भी उन्होंने उपरोक्त दोनों नाटकों में स्त्री–पुरुष संबंधों को, पारिवारिक मर्यादाओं–संघर्षों और जीवन की जटिलताओं को इस तरह आधुनिक संदर्भ के साथ बांध दिया है कि उनकी सम्यता को पूर्णता के साथ वर्तमान जीवन में महसूस किय जा सकता है। इस कारण उपरोक्त दोनों नाटकों के प्रमुख नारी पात्रों का तुलनात्मक अध्ययन अपरिहार्य हो जाता है। कहते हैं कि 'उड्द्र' शब्द का सही उच्चारण न कर पाने पर कालिदास को विद्योत्तमा ने घर से बाहर निकाल दिया था, और जब वे पद लिखकर लौटे तो उन्हें अपने घर के दरवाजे बंद मिलें। उसने दस्तक दी और कहा 'कपाट देही' विद्योत्तमा ने वांग वैशिष्ट्य की पहचान की, तब जाकर अंदर आने दिया। 'आषाढ़ का एक दिन' में भी कोई कालिदास हैं। उनंके जीवन में उसे घर से बाहर कर देनेवाली कोई विद्योत्तमा नहीं आयीं, परंतु एक मल्लिका जरूर हैं, जिसने अपने दरवाजे से महत्वाकांक्षी कालिदास को यश की चाह में स्वयं उज्जयनी भिजवा दिया। 'आधे अधूरे' नाटक की कथावस्तु स्त्री व पुरुष के बीच के संबंधों व विवाह की है। महेंद्रनाथ अपनी पत्नी सावित्री से प्रेम करता है। सावित्री भी उसे चाहती है, परंतु विवाह के बाद महेंद्रनाथ सावित्री को अपेक्षाओं पर खरा उतर न सके और सावित्री की आकांक्षा कभी पूरी नहीं होती, क्योंकि संपूर्णता किसी में भी नहीं होती है। परिपूर्ण पुरुष को खोजना असंभव है। असल में परिपूर्णता मात्र एक भ्रम है। इस तरह दोनों नाटकों के प्रमुख स्त्री पात्र अपने–अपने स्तर पर मानसिक वैचारिक संघर्ष करते हैं। दोनों नाटकों के प्रमुख स्त्री पात्रों का तुलनात्मक अध्ययन करने से पहले दोनों नाटको के नारी पात्रों का परिचय प्राप्त करना आवश्यक होगा। 'आषाढ़ का एक दिन' की मल्लिका और 'आधे अधूरे' की सावित्री के प्रमुख नारी पात्र हैं।

मल्लिका 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की प्रमुख नारी पात्र एवं नाटक की नायिका है। वह 'संवेदनशील, भावुक, निष्काम प्रेमिका, केंद्रीय पात्र, सरल नीति, उदार हृदय, उच्च मनोभूमि, प्रकृति प्रेमी, प्रेम प्रतिदान की भावना से हीन, व्यवहारिक, स्वाभिमानी, दरिद्र, दृढ़, सुशिक्षित नारी, लोकोपवाद की शिकार, करुणा का महासागर, मर्माहत, स्वच्छंद, कलामर्मज्ञ, काव्य रसिक, अत्यंत करुण पात्र है।' वह एक ऐसी नायिका है, जो नायक कालिदास से निरूस्वार्थ भाव से प्रेम करनेवाली प्रेमिका के रूप में उभरती है। एक ऐसी प्रेमिका है, जो बहुत ही संवेदनशील नारी है, जो पूरी तरह से भाव–भावना में जीतो है। इसीलिए उसने अपने प्रेमी कालिदास को मन ही मन चाहा है। वह एक संवेदनशील स्त्री होने के कारण प्रेम में व्यवहार को महत्व नहीं देती है। यही वजह है कि जब कालिदास अपना भविष्य बनाने के लिए उज्जयिनी जाने लगता है, तब मल्लिका की माँ अंबिका उससे कालिदास के साथ विवाह की बात छेड़ने के लिए प्रेरित करती है। पर वह अपनी माँ अंबिका से कहती है– "आज जब उनका जीवन एक नयी दिशा ग्रहण कर रहा है, मैं उनके सामने अपने स्वार्थ की घोषणा नहीं करना चाहती।" स्पष्ट है कि यहाँ पर उसका निरूस्वार्थ प्रेम प्रकट होता है। उसका प्रेम केवल निःस्वार्थ ही

नहीं है, बल्कि निश्छल और अशरीर है। इसलिए उसके सामने प्रेम से भी ज्यादा कर्तव्य है। वह कालिदास की बचपन की सहेली तथा काव्य–प्रेरणा है। कालिदास भी उससे दूर नहीं होना चाहता है, क्योंकि मल्लिका ही उसकी वास्तविक सृजनशक्ति है। अगर वह उससे दूर होगा, तो अपनी जमीन से उखड़ जायेगा। कालिदास के इस आस्था–स्थान 'मल्लिका' के संबंध में स्वयं नाटककार ने 'लहरों के राजहंस' की भूमिका में लिखा है–"मल्लिका, जो कालिदास की आस्था का विस्तारित रूप है। मल्लिका का चरित्र एक प्रेयसी और प्रेरणा का ही नहीं, भूमि में रोपित उस स्थिर आस्था का भी है, जो ऊपर से झुलसकर भी अपने मूल में विरोपित नहीं होता।" नाटक में उसका अस्तित्व 'रीढ़ की हड्डी' की तरह है।

नाटक की शुरूआत में मल्लिका एक चंचल–अल्हड सी ग्राम–बाला, जो सीधी–सादी सरल तथा सहज दिखाई दी है। लेकिन नाटक के आरंभ तथा अंत तक मल्लिका का चरित्र जीवन के कट अनुभवों से, समय के तपिश से तपकर, झुलसकर परिवर्तित हो चुका है। परिवर्तन ही जीवन है। लेकिन मल्लिका के अंतर में कालिदास के लिए वही संवेदना है। डॉ. द्विजराम यादव ने इस परिवर्तनशील चरित्र के संबंध में लिखा है– "एक अल्हड, संवेदनशील, भावुक, निश्चल युवती के रूप में मल्लिका नाटक के आरंभ में आती है और आगे चलकर त्यागमयी, विनम्र और परिणित हो जाती है।" मल्लिका, कालिदास की अनुपस्थिति में उसके द्वारा रचित सभी ग्रंथों को पढ़ने के लिए उज्जयिनी के व्यवसायियों से ग्रंथों को खरीदती है। साथ ही उसके नय महाकाव्य की रचना के लिए कोरे पन्नों को नत्थी करती है। उससे मल्लिका की कालिदास के प्रति बेइंतहा प्यार तथा काव्य–रूचि की भावाभिव्यक्ति हुई है। कालिदास से मल्लिका ने जो प्यार किया था, वह सीमातीत, शब्दातीत था। वह कालिदास के कार्य की उपलब्धि में अपने जीवन की साथकता देखती थी। वह एक निःस्वार्थ प्रेमिका थी। कालिदास के इस निर्णय ने उसके जीवन को अस्त–व्यस्त कर दिया था। उसने निरंतर स्वयं टूटकर कालिदास को बनाये रखने का प्रयास किया था। उसका अपेक्षा–भंग हो चुका था। उसने न चाहते हुए विलोम के बच्ची की माँ बनना स्वीकार किया। वह खुद को एक वीरांगना का रूप ही समझती है। अपने दारिद्र की वजह से उसे विलोम से जुड़ने के लिए विवश होना पड़ा। विलोम उसका भाव न बनकर उसके जीवन का सबसे बड़ा अभाव ही रहा। उसकी मान्यता में शारीरिक प्रेम की अपेक्षा भावना, संवेदना, मन का प्रेम ही महत्व का है। इसलिए उसने कभी अपने भाव के कोष्ठ को, जिसमें कालिदास ही बसा था उसे कभी रिक्त नहीं होने दिया। उसका कथन इसका साक्ष्य है – "मैं अपने को अपने में न देखकर तुममें देखती थी और आज यह सुन रही हूँ कि तुम सब छोड़कर संन्यास ले रहे हो? तटस्थ हो रहे हो? उदासोन? मुझे मेरी सत्ता के बांध से इस तरह वंचित कर दोगे?" उसका मतलब यह था कि मल्लिका ने अपने और कालिदस के जीवन को कभी अलग नहीं समझा। उसने खुद को कालिदास की छाया समझा। पर कालिदास यह कभी समझ न सका कि उसके जीवन से मल्लिका इस कदर जुड़ी है। ऐसा होता, तो वह राजकवि से प्रियंगु का पति, कश्मीर का शासक, 'कालिदास' से 'मातृगुप्त', वारांगनाओं के साथ शारीरिक संबंध आदि कभी न बनाता।
डा.रामकुमार वर्मा ने लिखा है– "नाटक में मल्लिका का महत्व ठीक वैसा ही है, जैसा सारे मानव शरीर में 'रीढ़ की हड्डी' का होता है। नाटककार को जो सफलता मिली है, उसके मूल में मल्लिका का चरित्र ही तो है।"

नाटककार मोहन राकेश ने 'आधे–अधूरे' नाटक की नायिका 'सावित्री' के द्वारा नारी की मुक्ति भावना, विघटनशील जीवनमूल्य, वैवाहिक संबंधों की विडंबना आदि पर पर्याप्त प्रकाश ड़ाला है। यह नाटक स्वातंत्र्योत्तर परिवर्तित सामाजिक परिवेश में एक परिवार के आपसी तनाव के बीच उठते क्यों? और कैसे? के प्रश्नों का अपने ढ़ंग से संश्लेषण है। सावित्री 'आधे–अधूरे' नाटक का प्रमुख नारी–चरित्र एवं नाटक की 'नायिका' है। मध्यमवर्गीय स्त्री का प्रतीक जो अर्थांजन की खोज, आधुनिक स्त्री, पत्नी के रूप में, फैशन को अपनाने वाली आधुनिक महिला, कामकाजी स्त्री, अति महात्वाकांक्षी स्त्री, जीवन में अनंत इच्छाओं को रखनेवाली, पति को मात्र एक दब्बा, रबर का सिक्का माननेवाली स्त्री। नाटक में वह महेंद्रनाथ की नौकरीपेश पत्नी के रूप में चित्रित की गयी है। महेंद्रनाथ के साथ पिछले बाईस वर्षों से अपने वैवाहिक जीवन को ढ़ो रही है। उसकी दो बेटियाँ – बिन्नी और किन्नी एवं बेटा है अशोक। घर की पूरी जिम्मेदारियाँ उसी पर हैं। खुद नाटककार उसके बारे में लिखते हैं– "उम्र चालीस को छूती। चेहरे पर यौवन की चमक और चाह फिर भी शष ब्लाउज और साडी साधारण होते हुए भी सुरूचिपूर्ण।"8 सावित्री हँसते–खेलते जिंदगी जीना चाहती है, वह भी भरी–पूरी जिंदगी। उच्च वर्गीय औरतों की तरह जीवन में बहुत कुछ प्राप्त करना चाहती है।

मोहन राकेश ने सावित्री को अनेकविध नारी–रूपों में चित्रित किया है। नाटक में वह सर्वप्रथम नौकरी–पेशा, गृहस्थ एवं माँ आदि नारी रूपों में प्रकट हुई है। नाटक के आरंभ में ही वह दफ्तर से थककर घर लौट आती है। पर आते समय उसके हाथ में दफ्तर के कुछेक रजिस्टर तथा फाइलों के साथ, घर का भी आवश्यक सामान रहता है। सामान ढोकर

लाने की उलझन भी उसके चेहरे से व्यक्त होती है। वह थकी–हारी आती है, तो घर पूरा बिखरा हुआ, अस्त–व्यस्थ देखती है। घर का एक भी सामान ठीक ढ़ंग से नहीं है। किन्नी की स्कूल बैग अधखुली–सी तिपाई पर पड़ी है। अशोक की चीजें सोले पर, महेंद्रनाथ का पाजाम कुर्सी पर झूल रहा है तथा चाय की जूठी प्यालियाँ डायनिंग पर वैसी ही पडी हुई हैं। इन सबको देखकर उसका माथा ठनकता है। परिणामस्वरूप वह महेंद्र पर क्रोध व्यक्त करती है। उसकी दृष्टि में घर पर निरूध्योगी बैठकर वक्त गँवानेवाला महेंद्र ही तो है और उसे घर का पिता होने, बड़ा होने के नाते जिम्मेदार होना चाहिए। कुछ भी काम ना करे, फिर भी कम–से–कम घर को तो सँभाले और सँवारे। परंतु वह कुछ भी नहीं करता, इसलिए वह उससे चिढती और गुस्सा करती है।

सावित्री पहले तो एक सीधी–सादी गृहिणी के रूप में महेंद्रनाथ के साथ विवाहित जीवन बिताती है। विवाह पश्चात उसका जीवन सुखपूर्वक बीत जाता है, पर वह महेंद्रनाथ के अनुसार। थोड़े ही सालों में महेंद्रनाथ के बिजनेस में घाटा आ गया है और वह पूर्णतरू जीवन से हारकर, तकदीर को दोष देते घर में बेकार बैठता है। अब सीधी–सादी गृहिणी पुरूष का यों बेकार, हाथ पर हाथ धरे बैठना सहन नहीं कर पाती है। पति को समझती है, खुद भी समझदारी से काम लेती है। पर परिवार चलाने के लिए कुछ–न–कुछ करना जरूरी था, तो वह नौकरी करती है। शादी–शुदा जिंदगी को लेकर उसके भी कई सपने थे, पर बेकार महेंद्रनाथ से वह क्या उम्मीद कर सकती है? खुद की नौकरी के साथ, उसमें स्वावलंबनता की भावना, स्वतंत्र अस्तित्व के विचार तथा महत्वाकांक्षाएँ जगने लागती हैं। उसने बहुत चाहा कि घर चलाने में महेंद्रनाथ, बेटा अशोक उसकी मदद करें, कोई व्यवसाय करें, ताकि घर भी संभल जाये और उसकी दबी इच्छाएँ भी प्री हो जाये। लेकिन महेंद्र और अशोक दोनों पुरूषों में आत्मविश्वास की कमी थी, वे कुछ करना ही नहीं चाहते थे। बेकार पुरूष को कोई आदर या प्यार नहीं दे सकता है, न ही घरवाले और न ही बाहरवाले। खुद महेंद्रनाथ ने यथार्थ को अपने मुँह से बयान की है – ”म उस घर में एक रबड़–स्टैप भी नहीं, सिर्फ एक रबड़ का टुकड़ा हूँ – बार–बार घिसा जानेवाला रबड़ का टुकड़ा अपनी जिंदगी चौपट करने का जिम्मेदार मैं हूँ। उन सबकी जिम्मेदारियाँ चौपट करने का जिम्मेदार मैं हूँ। मैं आरामतलब हूँ, घरघुसरा हूँ, मेरी हड्डियों में जंग लगा है। मुझे पता है, मैं एक कीड़ा हूँ जिसने अंदर–ही–अंदर इस घर को खा लिया है।“ सावित्री की दृष्टि में महेंद्रनाथ केवल ‘लिजालिजा और चिपचिपसा पासा’ आदमी बनकर रह गया है। जबकि वह अपने पति के रूप में एक ऐसा पूर्ण–पुरूष चाहती है, जिसमें एक मादा और उसकी एक पहचान हो। परंतु उसकी यह पूर्ण पुरूष की चाह कभी पूरी नहीं हो पाती। उसके फलस्वरूप उसमें कटुता आ जाती है। उसकी भावनाएँ जैसी मर जाती हैं।

सावित्री अपने घर की आर्थिक–स्थिति को सुधारने हेतु, अपनी संवेदनाओं को जीवित रखने तथा अपनी सुव्यवस्था में पनपती महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने के उद्देश्य से घर से बाहर जगमोहन से लेकर सिंघानिया तक अनेक पुरूषों से जुड़ जाती है। लेकिन हर पुरूष में वह कहीं–न–कहीं एक अधूरापन पाती है और किसी–न–किसी कारण से उनसे आहत होकर उनसे दूर चली जाती है। फिर एक बार वह हार जाती है, थक जाती है। उसकी संवेदना पर आघात–सा होता है। जिंदगी को पूरी तरह से जीने की उसकी महत्वाकांक्षा ने उसका स्त्री रूप, विद्रूप बना डाला। अंत में जब पुरूषों पर से उसका विश्वास उठ जाता है, तो बस यह कहती है– ”सब–के–सब–एक–से। बिलकुल एक–से हैं आप लोग! अलग–अलग मुखौटे, पर चेहरा? पर चेहरा सबका एक ही।“ ओम शिवपुरी ने इस नाटक को ”अनुभव की समानता का दिग्दर्शन कहा है।“

निष्कर्ष–

मोहन राकेश के नाटकों में प्रमुख नारी पात्रों का तुलनात्मक अध्ययन में ‘आषाढ़ का एक दिन’ की मल्लिका कालिदास से निस्वार्थ प्रेम करती है। कालिदास के लिए खुद के जीवन को समर्पित करती है। मल्लिका कहती है ”मैं टूट कर भी अनुभव करती हूँ कि तुम बने रहो। क्योंकि मैं स्वयं को अपने में न देखकर तुममें देखती रही।“ उसके इस वक्तव्य से स्पष्ट होता है कि वह एक आदर्श नारी पात्र है। दूसरी नारी पात्र है ‘आधे–अधूरे’ की सावित्री, जो अपने स्वार्थ के लिए अपने परिवार से दूर होना चाहती है। सावित्री आधुनिक सुशिक्षित नारी होने के बावजूद भी अपनी पति की कमियों को ही देखती रही। वह यह भूल जाती है कि वह खुद भी अपरिपूर्ण है। असल में परिपूर्णता की खोज मात्र केवल एक भ्रम है न कि वास्तविकता। इन पात्रों के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि मल्लिका पौराणिक पात्र होने के बावजूद भी आदर्शयुक्त नारी का प्रतिबिंब है और उसी प्रकार सावित्री वर्तमान समाज की उपज है जो अपनी परिस्थितियों के कारण पति में अधूरेपन को पाती है और स्वयं भी अधूरी बन जाती है।

संदर्भ ग्रंथ–

1. मोहन राकेश का संचयन, पृ0 11
2. परिवेश, मोहन राकेश, 1967, भारतीय ज्ञानपीठ प्र0, वाराणसी।
3. साहित्यिक और सांस्कृतिक दृष्टि, मोहन राकेश, 1975।
4. नामवर सिंह 'नई पत्रिका' पृ0 9
5. अंधेरे बन्द कमरे, मोहन राकेश, 1991, राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली–2
6. अपने दौर के महानायक कहलाए मोहन राकेश (प्रभासाक्षी), पृ0 34
7. आषाढ़ का एक दिन – मोहन राकेश, पृ0 79
8. आधुनिकता और हिन्दी उपन्यास, 2005, राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली–2
9. आधे अधूरे – मोहन राकेश, पृ0 43
10. आधे अधूरे – मोहन राकेश, प0 76
11. आधे अधूरे – मोहन राकेश, पृ0 89
12. ओम शिवपुरी – नई कहानी के आंदोलन के स्तंभ मोहन राकेश (प्रभासाक्षी), पृ0 11
13. अन्तराल, मोहन राकेश, 2005, राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली–2